लघुकथा की समासिकता

डॉ. नवनीत वर्मा,

व्याख्याता (हिन्दी)

चौ. ब.रा.गो. राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

समासिकता लघुकथा का प्रमुख गुण है। समासिकता का अर्थ है कम से कम शब्दों में अधिक भावों को संजोना। यानि 'गागर में सागर भरना'। लघुकथा इस बात पर खरी उतरी है। लघु कथाकार जीवन की छोटी से छोटी घटना के अर्थ में अपने विचारों की सत्यता को इस प्रकार हमारे सम्मुख रख देता है जैसे उसके द्वारा कुछ कहा ही न गया हो परन्तु वास्तव में वह सम्पूर्णतः लघुकथा में ही कह जाता है।

श्री शंकर पुण्ता बेकर इसके समासिक गुण के सम्बन्ध में लिखते हैं कि "लघुकथा जितनी लघु होती है उतनी ही अधिकवह और अर्थगंभीर होती है। उसक लेखन में उतनी ही गहरी अनुभूति की तथा चुस्त शिल्प की जरूरत होती है।"[1] डॉ. स्वर्णाकरण भी लघुकथा के समासिक गुण के पक्ष में कहती हैं कि "उसमें संक्षेप में अधिक कहने का कौशल होता है व खत को तार के रूप में प्रस्तुत करने का शिल्प नियोजन है।"[2]

युग विवशताओं, विद्रूपताओं और उसे सहता मानव भ्रष्टाचारयुक्त व्यवस्था और उससे त्रस्त मनुष्य के विविध रूपों को अपने समासिक गुण के अन्तर्गत संजो रही है लघुकथा। श्री मदन अरोड़ा जी लघुकथा "आविष्कार" समासिक गुण से युक्त हैं–

"उन्हे इस वर्ष का नोबल पुरस्कार दिया जा रहा है। उन्होंने नेता, पुलिस, कर्मचारी, वकील और डॉक्टर में "दिल" नाम की चीज खोजी है।"[3]

वर्तमान में हमारे देश में बढ़ती निर्धनता की समस्या और प्रशासन की धांधलेबाजी को दो–तीन पंक्तियों में श्री आदित्य श्रीवास्तव ने अपनी लघुकथा "समाचार–पत्र" के अन्तर्गत समेटा है–

"मुख पृष्ठः इस वर्ष गेहूं का रिकॉर्ड उत्पादन भारत खाद्यान के क्षेत्र में आत्मनिर्भर।

अंतिम पृष्ठ : अमुख शहर में भूख से पीड़ित दो बच्चों ने दम तोड़ा।"[4]

श्री अशोक मिश्र की लघुकथा 'आंखें' के अन्तर्गत वर्तमान न्याय व्यवस्था पर तीखा प्रहार भी दो–तीन पंक्तियों में बखूबी किया गया है–

"तुम्हारी मरने से पूर्व कोई इच्छा हो तो बताओ?"

"तो सुनिये और कान खोलकर सुनिये– मैं मरने से पूर्व अपनी दोनों आंखें अंधी न्याय व्यवस्था को देना चाहता हूँ।"[5]

श्री रामनिवास मानव की "औरत की भूख" लघुकथा के अन्तर्गत औरत की त्यागमयी प्रवृत्ति को कितनी मार्मिकता से कम शब्दों में उजागर किया गया है–

"आज कम है तो कल मैंने दो चपात्तियां अधिक खा ली थीं।"

"लेकिन तुम्हारी भूख .....?"

"औरत की भूख का क्या? अधिक चपात्तियां बच जाये ंतो भूख अधिक और कम बचे ंतो कम।"[6]

कई बार लघुकथा का रूप इतना छोटा होता है और भाव इससे कई गुणा अधिक होता है। यानि बिहारी के दोहे "देखने में छोटे, घाव करे गम्भीर" वाली उक्ति इस पर लागू हो जाती है, जिसका प्रभाव एक बिजली के झटके की भांति लगता है। श्री किशोर श्रीवास्तव ने लघुकथा 'अन्तर' में इसी प्रवृत्ति को उजागर किया है–

"उस षोडशी कन्या और सत्तर साल की बुढ़िया ने एक साथ भरी हुई बस में प्रवेश किया।

"बस के अन्दर पहुंच कर बुढ़िया समझ नहीं पा रही थी कि वह कहां बैठे और षोडशी कन्या नहीं समझ पा रही थी कि वह कहां बैठे।"[7]

इसी तरह नारी की स्थिति को अमरनाथ चौधरी "अब्ज" में लघुकथा "भय" के अन्तर्गत बहुत ही छोटे रूप में शब्दों की मार की है–

"वर्तमान समय को देखते हुए उसने ऑफिस जाना छोड़ दिया। कारण बेटी जवान हो गई।"[8]

भूख के समक्ष माँ की महत्त्वहीनता का अंकन डॉ. पांडुरंग भोपले ने लघुकथा "भूख" के अन्तर्गत समासिक तरीके से किया है–

"आज रोटी नहीं देगी?"

"बेटा बंगलेवाली ने कल तेरा बाप मर गया था न, इसलिए दया दिखायी थी उसने।"

"तो आज तुम मर जाओ न माँ। बच्चे ने कहा।"[9]

धर्म–साम्प्रदायिकता की भड़की आग को कम करने के लिए लघुकथाओं ने अपनी अहम् भूमिका निभाई है। धार्मिक सद्भावना पर आधारित श्री पारस दासोत की लघुकथा "तुम कौन हो" में अल्प शब्दों की सुन्दर अभिव्यक्ति देखी जा सकती है–

"जब मैं पैदा हुआ था....

मेरे पास न हिन्दू था.... न मुसलमान .... न ईसाई .... ओर न कोई जैन।

जो थी वह केवल ..... पांच फीट लम्बी ..... मां की लाश।"[10]

श्री विष्णु प्रभाकर की लघुकथा "चोरी का अर्थ" भी अपनी अंतिम पंक्ति में गागर में सागर समेटे हुए है–

"एक दुकानदार की चोरी होने पर दूसरा व्यक्ति उससे चोरी के बारे में पूछता है तो पहले वाला कहता है–

कुछ नहीं .....

कोई आदमी अपनी ईमानदारी मेरे पास गिरवी रखकर पैसे ले गया है.....।"[11]

समासिक गुण को श्री अमरनाथ चौधरी ने अपनी लघुकथाओं में बहुत अच्छी तरह बिखेरा है। उनकी अधिकतर लघुकथायें दो या तीन पंक्तियों की होते हुए भी अपनी पहचान बनाने में सफल हुई हैं। अमरनाथ चौधरी "अब्ज" की लघुकथा "सन्दर्भ" के अन्तर्गत देश में फैले भ्रष्टाचार की स्थिति को व्यंग्य के साथ दो ही पंक्तियों में स्पष्ट किया गया है–

"तुम तो अच्छी तरह जानते हो, मेरे समर्थक कितने हैं इसलिए ताप ने शीतलता से कहा।"[12]

श्री अमरनाथ चौधरी जी की ही एक और लघुकथा "कलमदान" भी समासिक गुण से भरपूर है। यथा–

"भाई साहब! आजकल आप कलम छोड़ तलवार हाथ में ले.....।"

"मैंने कलम दान कर दिया।"

"क्यों! किसको?" आश्चर्य से उसने पूछा।

शान्त स्वर में वह बोला– "पेट के लिए गरीबी को।"[14]

शब्दों की मारक शक्ति की अभिव्यक्ति डॉ. परमेश्वर गोयल की लघुकथा "भाव" भी वर्तमान मनुष्य की कामुक दृष्टि को उकेरती है–

"ऐ घासवाली! क्या भाव कर रखा है?"

"पांच रुपये बाबूजी"

"और तेरे .....?"

"जो आपकी बेटी के हैं वही भाव मेरे भी हैं।"[15]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समासिकता का गुण लघुकथा की प्रमुख विशिष्टता है। शब्दों से संजोया हुआ इसका कलेवर बहुत छोटा होता है परन्तु इसके कलेवर की मारक शक्ति बहुत तीव्र होती है जो मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ती है। लघुकथा के

अन्तर्गत कबीर के दोहे व बिहारी के दोहे का सम्मिश्रण देखने को मिलता है क्योंकि लघुकथा भी कबीर के दोहे की भांति समाज की विसंगतियों, विकृतियों पर प्रहार करती है और बिहारी के दोहे की भांति संक्षिप्तता व समासिकता भाव लिये होती है। यहां डॉ. नामवर सिंह के शब्द बड़े सार्थक लगते हैं– "काव्यशास्त्र के आयामों ने मुख्यार्थ के भीतर से जो अर्थ की व्यंजना कराई थी वह इसी तरह का एक रूप है। जीवन का सत्य इसी तरह खंड के भीतर से, किन्तु उसे खंडित करता हुआ पूर्ण की ओर संकेत करता है। मुख्यार्थ को बाधित करके रसमय अर्थ को व्यंजित करता है, जीवन की हर छोटी घटना के भीतर से सम्पूर्ण जीवन की सार्थकता का अनुभव करता है।..... ऐसे अर्थ गाम्भीर्य को मैं सार्थकता कहता हूँ।"[16]कई लघुकथाएं तो ऐसी है जो दो अथवा तीन पंक्तियों की ही हैं परन्तु अपनी मारक शक्ति से किसी बड़ी कहानी को भी पीछे छोड़ती नजर आती है।

संदर्भ–

1. रोशन लाल सुरीरवाला/प्रभाकर शर्मा : हिन्दी लघुकथा : प्रकृति और पहचान, पृ. 76
2. चंद्र भूषण सिंह "चन्द्र" : मिट्टी की गंध, पृ. 9
3. उमाशंकर मिश्र : प्रतिबिम्ब, पृ. 13
4. उमाशंकर मिश्र : प्रतिबिम्ब, पृ. 9
5. महेन्द्र सिंह महलान/अजना अनिल : संघर्ष, पृ. 67
6. वहीं, पृ. 92
7. उमाशंकर सिंह : प्रतिबिम्ब, पृ. 10
8. डॉ. सतीशकुमार पुष्करणा : कथादेश, पृ. 65
9. महेन्द्र सिंह महलान/अंजना अनिल : संघर्ष, पृ. 62
10. महेन्द्र सिंह महलान/मोहन योगी :सबूत–दर–सबूत, पृ. 41
11. डॉ. सीताशराज पुष्करणा : कथादेश, पृ. 60
12. वही
13. वही, पृ. 56
14. वही, पृ. 187
15. वही, पृ. 189
16. कृष्णा अग्निहोत्री : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी, पृ. 93